द्वितीय अध्याय

" 'पहला गिरमिटिया' तथा 'महानायक' का विषयगत विवेचन"

द्वितीय अध्याय

"'पहला गिरमिटिया' तथा 'महानायक' का विषयगत विवेचन"

प्रस्तावना :

स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यासकारों में गिरिराज किशोर का स्थान उल्लेखनीय है। उनके बारे में रवींद्र कालिया लिखते हैं - "अगर एक पलड़े में गिरिराज का साहित्य रखा जाये और दूसरे पलड़े में साठोत्तरी पीढ़ी का समस्त साहित्य, तो गिरिराज का पलड़ा भारी रहेगा।"[1] उक्त कथन से समझने में देर नहीं लगती कि स्वातंत्र्योत्तर काल के प्रमुख रचनाकारों में गिरिराज किशोर का महत्त्वपूर्ण स्थान है। गिरिराज किशोर का बहुमुखी व्यक्तित्व है। उन्होंने उपन्यास, कहानी, नाटक, एकांकी, आलोचनात्मक साहित्य, बाल-साहित्य आदि अनेक विधाओं में लेखन किया हुआ है। गिरिराज किशोर का 'पहला गिरमिटिया' उपन्यास का विषयगत विवेचन यहाँ प्रस्तुत है -

2.1 गिरिराज किशोर के 'पहला गिरमिटिया' का विषयगत विवेचन -

प्रकाशन क्रम की दृष्टि से 'पहला गिरमिटिया' गिरिराज किशोर का पंद्रहवाँ उपन्यास है। इस उपन्यास का प्रथम प्रकाशन भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली से हुआ है। 904 पृष्ठों का यह उपन्यास महात्मा गाँधी के दक्षिण-अफ्रीकी जीवन पर केंद्रित उपन्यास है। प्रस्तुत उपन्यास के लिए उन्हें सन् 2000 का व्यास सम्मान प्राप्त हुआ है।

गिरिराज किशोर ने इस उपन्यास में महात्मा गाँधी के मोहनदास से गांधी में रुपांतरित होने की प्रक्रिया को अंकित किया है। यह उपन्यास अपने देश और दुनिया से दूर बसे दक्षिण अफ्रीका, वहाँ पर टूटते-मरते भारतीय गिरमिटिये और व्यवसायियों की आज़ादी के संघर्ष को अभिव्यक्ति दी है। प्रस्तुत उपन्यास लिखने के दौरान उन्होंने दक्षिण अफ्रीका, इंग्लैंड, मारीशस की यात्रा की। उन्होंने तथ्यों, घटनाओं, स्थलों और पात्रों को अपने से जोड़ा। सामग्री इकट्ठा की और जो सार मिला उसे प्रामाणिकता के साथ प्रस्तुत किया। प्रस्तुत

---

1. सं. रवींद्र कालिया - सृजन के सहयात्री (सन् 1996), पृष्ठ-22

उपन्यास में उन्होंने भारतीय समाज की परंपरा, पारिवारिक बिखराव, राजनीति में स्थान, रोजी-रोटी की समस्या, आर्थिक संकट आदि की ओर भी यह उपन्यास के दूवारा ध्यान आकर्षित किया है।

महात्मा गांधी जी भले ही हमारे देश की स्वाधीनता के संघर्ष पुरुष रहे हो लेकिन दक्षिण अफ्रीका में मोहनदास के रूप में बीता उनका जीवन आम आदमी की संवेदना और अनुभवों के अधिक निकट था। इसी कारण लेखक का कहना सही है कि उन्होंने यह उपन्यास महात्मा गांधी पर न लिखकर मोहनदास पर लिखा है। ''आगे आनेवाली पीढ़ी को मोहनदास की ज्यादा जरूरत है जिससे वह जान सके मोहनदास महात्मा गांधी कैसे बना? गांधी एक नैतिक पुरुष होने के साथ-साथ समाज पुरुष भी है जो अपनी कमजोरियों को कभी नहीं छुपाता। अपनी कमजोरियों का एहसास ही महानता के दूवार खोलता है।''[1] इसी कारण गिरिराज किशोर के अनुसार - ''कथा हमेशा संघर्ष की होती है।''[2] इसलिए मोहनदास से गांधी की इस संघर्ष कथा को ही अपना केंद्रीय विषय बनाने को बाध्य होते हैं।

मोहनदास सामान्य व्यक्ति है न कि वह राष्ट्रपिता है। मोहनदास अपनी पत्नी के जेवर बेचकर बार-एट-लॉ की लंदन की डीग्री लेकर राजकोट लौट आते हैं। राजकोट में वकालत की प्रैक्टिस करते समय ईमानदार होने के कारण उन्हें तकलीफ उठानी पडती है। किसानों से टैक्स लिया जाता था। राजा के अधिकार भी सीमित कर दिए थे। भ्रष्ट न्याय व्यवस्था तथा बेईमानी न सहने के कारण उन्होंने एक साल के गिरमिट पर दक्षिण-अफ्रीका जाना तय किया। दक्षिण-अफ्रीका जाने के बाद वे दादा अब्दुला के साथ डरबन में कोर्ट रुम देखने जाते हैं। वे जाते समय कोट, पतलून और गुजराती टोपी पहनकर जाते हैं। कोर्ट में जाने के बाद मेजिस्ट्रेट ने मोहनदास को पगड़ी उतारने को कहा तब मोहनदास मेजिस्ट्रेट को कहते हैं - ''मी लार्ड, यह फेटा है। हम लोगों कि सम्मान का प्रतीक। मेरे लिए ऐसा करना संभव नहीं...''[3] और मोहनदास कोर्ट रुम से बाहर चले जाते हैं। यही से दक्षिण अफ्रीका में मोहनदास का कड़ा संघर्ष शुरू हो जाता है।

---

1. गिरिराज किशोर - पहला गिरमिटिया, पृष्ठ - 7-8
2. सं. प्रभाकर श्रोत्रिय - वागर्थ, अगस्त 2000, पृष्ठ - 102
3. गिरिराज किशोर - पहला गिरमिटिया, पृष्ठ - 75

मोहनदास जब दादा अब्दुला के केस के सिलसिले में प्रिटोरिया में मि.बेकर के पास जाने के लिए प्रथम श्रेणी का रेल का टिकट लेने के बावजूद उन्हें अश्वेत होने के कारण रेल के दो आदमी पिटते हैं और उन्हें रेल से बाहर फेंक देते हैं। इसी दौरान पार्डीफोक में कोच लिडर मोहनदास को इसलिए पिटता है कि वह उसके सिगरेट पिने के लिए, कोच बॉक्स से उठकर फर्श पर बिछे गंदे कपड़े पर बैठने को तैयार नहीं था। उन्हें 'ग्रैण्ड नेशनल होटल' में अश्वेत होने के कारण ठहरने नहीं दिया।

दक्षिण अफ्रीका को मोहनदास एक साल के गिरमिट पर रोजी-रोटी के लिए चले जाते हैं किंतु वह पहला गिरमिटिया था जो कुली और बैरिस्टर भी था। वैसे तो उन दिनों भारत के कई गरीब-अनपढ़ मजदूर पाँच साल के गिरमिट पर दक्षिण अफ्रीका जाते थे। दक्षिण अफ्रीका में उन दिनों हिंदुस्तानियों के डर और दब्बूपन को देखकर मोहनदास दादा अब्दुला से इन कारणों को जानना चाहते हैं तब दादा अब्दुला कहते हैं - "हम पैदा तो हिंदुस्तान में हुए, जीते यहाँ है और जीने की शर्तें लंदन में तय होती हैं। उनको लागु यहाँ के हुक्मरान करते हैं।"[1] दक्षिण-अफ्रीका में हिंदुस्तानियों की हालत देखकर मोहनदास को अपने बचपन के दोस्त उका की याद आती है। दोस्त उका के साथ खेलने पर बा पानी डालकर शुद्ध करती थी।

एक दिन बालसुंदरम् मोहनदास के पास आता है तब मोहनदास उन्हें जख्मी होने का कारण पूँछते हैं, तो बालसुंदरम् बताता है कि एक दिन बगीचे में पानी देने के लिए थोड़ी देर हो गई तो मालिक ने उसे बहुत पिटा, इसी कारण उसकी यह हालत हुई है। सन् 1885 के समय मैजिस्ट्रेट के सामने एक भारतीय नौजवान खड़ा था। उस पर यह आरोप था कि वह पूरी तरह ठीक होने के बावजूद वह भीख माँगता है। तब भारतीय नौजवान कहता है कि मैं एक गोरे के यहाँ खेती में काम करता था। एक दिन खेती में आग लग गई। मैं आग बुझाता था लेकिन लपेटें बहुत तेज होने के कारण मैं पीछे हटता था, तो मालिक मुझे पिटता था। मैं आग बुझाते-बुझाते बेहोश हो गया। जब होश आया तब मेरी आँखे चली गई थी। न मालिक ने मेरा इलाज करवाया न घर जाने का किराया दिया। 'रॉयल हॉटेल' में एक कुली वेटर के रूप में काम करता था। बावर्चीखाने में ट्रे जल्दी न मिलने के कारण होटल मालिक जॉनसन जूनियर ने इतना पिटा की नाक मूँह से खून बहता था।

1. गिरिराज किशोर - पहला गिरमिटिया, पृष्ठ - 88

एक गिरमिटिया पर आरोप था कि वह काम करने से इन्कार करता था। इसी कारण उस गिरमिटियों को दो साल की सजा हुई। जेल से छूट जाने पर फिर गिरमिट तोड़ता था फिर जेल जाता था। उसे बार-बार क्यों जेल जाते हो, ऐसा पूछने पर वह कहता है - "हुजुर, मुझे सजाए-मौत दे दीजिए पर मालिक के पास जाने के लिए न कहिए, वह कसाई है।"[1] इससे स्पष्ट होता है कि दक्षिण अफ्रीका में मालिक लोग गिरमिटियों पर अन्याय-अत्याचार करते थे। मोहनदास दक्षिण अफ्रीका में रह रहे गिरमिटियों को संबोधित करते हुए कहते हैं - "मैं आपके सामने एक प्रस्ताव पेश करना चाहता हूँ, भारतीयों का एक ऐसा संगठन हो जो यहाँ पर बसे हिंदुस्तानियों की तकलीफों और उन पर होनेवाले अन्यायों के खिलाफ आवाज उठा सके और हुक्मरानों के कानों तक उस आवाज को पहुँचाया जा सके।"[2] इससे स्पष्ट होता है कि अन्याय-अत्याचार के खिलाफ आवाज उठाने के लिए मोहनदास गिरमिटियों में एकता प्रस्थापित करना चाहते हैं।

सन् 1894 को मोहनदास गोरे के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए 'नेटाल नेशनल काँग्रेस' की स्थापना करते हैं। लोगों को रहने के लिए पहले 'फिनिक्स' और बाद में 'टॉलस्टाय आश्रम', वहाँ वे उनके लड़कों (गिरमिटियों के) पढ़ने के लिए स्कूल शुरू करते हैं। गिरमिटियों को तीन पौण्ड टैक्स, टांसवाल में रहने के लिए एशियाटिक रजिस्ट्रेशन करना आदि के खिलाफ सरकार के विरुद्ध संघर्ष के लिए 'सत्याग्रह' को महत्त्वपूर्ण मानते हैं। इस संदर्भ में गिरमिटियों को संबोधित करते हुए मोहनदास कहते हैं - "सत्याग्रह में नफरत की कोई जगह नहीं, सत्याग्रह देह बल वर्जित है। यह सहिष्णुता की परम परीक्षा है।"[3] इससे स्पष्ट होता है कि अन्याय के विरूद्ध लडनेवाले मोहनदास सत्याग्रह को महत्त्वपूर्ण मानते हैं। इसी बीच उनको तथा उनके परिवारवालों तथा गिरमिटियों को कई बार जेल जाना पड़ता है। अंत में दक्षिण अफ्रीका की सरकार गिरमिटियों की माँगे मान्य करती हैं और गिरमिटियों को न्याय मिलता है।

दक्षिण अफ्रीका में श्वेत-अश्वेत (काले-गोरे) का भेद मोहनदास को दिखाई देता है, इसी कारण उन्हें प्रथम श्रेणी का रेल का टिकट होने के बावजूद उन्हें प्रथम श्रेणी में बैठने नहीं दिया जाता। पार्डीफोक में कोच बॉक्स के अंदर बैठने नहीं दिया जाता। तथा प्रिटोरिया में 'ग्रैण्ड नेशनल होटल' में रहने नहीं दिया जाता। यह जो श्वेत-अश्वेत की खाई है उसे मिटाने के लिए मोहनदास प्रयास करते हैं और उन्हें सफलता मिलती है।

1. गिरिराज किशोर - पहला गिरमिटिया, पृष्ठ - 374
2. वही, पृष्ठ - 163
3. वही, पृष्ठ - 649

दक्षिण अफ्रीका में न सिर्फ गिरमिटियों की दयनीय स्थिति थी बल्कि महिलाओं तथा उनके छोटे बच्चों की स्थिति भी दयनीय थी। सन् 1891 के कानून के अनुसार औरत और कम उम्र के कुलियों को उनके सामर्थ्य के अनुसार काम दिया जाता था। गन्ना काटना, गन्ने की पुलिया ढोना, ट्रक में लादना, पानी चलाना, घास काटना आदि। औरतों को उनके सामर्थ्य से अधिक बोझा दिया जाता था। इसी कारण वे लडखड़ाती हुई चलती थी। आपत्ति करने पर उन पर चोरी का इल्जाम लगाकर पैसे काट लिए जाते थे। काम करते वक्त सौ मर्दों पर चालिस स्त्रियाँ काम करती थी। इसी कारण गिरमिटियों में यौन संबंध की बीमारियाँ देखने को मिलती है।

छोटे बच्चों की भी दयनीय स्थिति थी। सुबह चार बजे से लेकर रात तक छोटे बच्चों को धूप में या ठंड में रखकर काम किया जाता था। ठंडी या गर्मी के कारण अनेक छोटे बच्चों की मृत्यु हो जाती थी। दक्षिण अफ्रीका में गिरमिटियों की दयनीय स्थिति देखकर मोहनदास को ऐसा लगता है कि यहाँ हिंदुस्तानियों की दुर्दशा का एक बड़ा कारण भारत की तरह यहाँ भी एकजुटता का अभाव था। मोहनदास तैय्यब सेठ से मिलकर हाजी मोहम्मद जोसब के घर में एक बैठक का आयोजन करते हैं क्योंकि इसी कारण भारतीयों को अपने अधिकारों के प्रति सचेत रहने में मदद मिल सके।

मोहनदास को अपने बच्चों की पढ़ाई की चिंता हमेशा लगी रहती है। मोहनदास चाहते तो उन्हें यूरोपियन स्कूल में दाखिल कर सकते थे, लेकिन उनके मन में हमेशा एक प्रश्न निर्माण होता था - क्या उनके बच्चों को गोरे के बच्चे के साथ पढ़ने देंगे? लेकिन बहुत सोच -विचार कर यह तय करते हैं कि वे स्वयं ही बच्चों को पढायेंगे। बच्चों की पढ़ाई में निरंतरता का अभाव देखकर कस्तुरबा कहती हैं - ''बच्चों को पढ़ाई का इंतजाम नहीं था तो यहाँ लाकर क्यों पटक दिया? वहाँ कम से कम पढ़ तो रहे थे। यहाँ क्या मिला? पढ़ाई भी गयी, बाप का प्यार तो न तब था न अब है। बस् चौबीस घण्टे में एकाध-बार दर्शन जरूर हो जाता है।''[1]

मोहनदास बच्चों की पढ़ाई के लिए मातृभाषा को ही महत्त्वपूर्ण मानते हैं। हेनरी पोलक जब हरिलाल को अंग्रेजी पढ़ाने के बारे में पूछता है, तब मोहनदास कहते हैं -

1. गिरिराज किशोर - पहला गिरमिटिया, पृष्ठ - 449

"दुनिया में क्या ऐसा कोई समाज है, जो अपनी मातृभाषा त्यागकर, दूसरी भाषा में उन्नति का सपना देखे?"[1] कहना गलत नहीं होगा कि राष्ट्र तथा देश की उन्नति के लिए राष्ट्रभाषा को महत्त्वपूर्ण स्थान है। मोहनदास हमेशा अवैध यौन संबंध का विरोध करते थे। 'टॉलस्टाय आश्रम' में एक स्कूल की लड़की मोहनदास को एक लड़के ने उसके बालों को अजीब ढंग से छूने की बात बताती है। इस कारण मोहनदास उस लड़के को आश्रम से निष्कासित करते हैं तथा लड़की के बाल कटवाते हैं।

'फिनिक्स' में मोहनदास का पुत्र मणिलाल और जेकी के बीच यौन संबंध होता है, यह बात मोहनदास को मालूम होने पर वे बहुत चिंतित होते हैं और वे स्वयं को भी गुनहगार मानते हैं और प्रायश्चित्त के रूप में उपवास करते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि मोहनदास ने हमेशा अवैध यौन संबंध का विरोध किया है।

2.1.2 निष्कर्ष -

निष्कर्षत: कहना सही होगा कि गिरिराज किशोर के 'पहला गिरमिटिया' उपन्यास में मोहनदास के महात्मा बनने की गाथा है। इस तरह सन् 1893 से सन् 1914 तक चलाए गए उस सत्याग्रह आंदोलन के कारण दक्षिण-अफ्रीका की अंग्रेज सरकार को भारतीय गिरमिटियों के साथ न्यायपूर्ण व्यवहार की माँग माननी पड़ती है। गिरिराज किशोर ने यहाँ राष्ट्रपिता गांधी का नहीं बल्कि सामान्य व्यक्ति का मोहनदास के रूप में चित्रण किया है। इसमें मोहनदास की वकालत में असफलता, दक्षिण-अफ्रीका प्रस्थान, मोहनदास के साथ दुर्व्यवहार, गिरमिटियों की दयनीय स्थिति, गिरमिटियों की समस्या का समाधान, मानव-मानव के बीच खाई का उद्घाटन, बच्चों की पढ़ाने की नई नीति का प्रयोग, अवैध यौन संबंध का विरोध आदि का प्रस्तुत उपन्यास में सूक्ष्मता से चित्रण मिलता है। अत: कहना सही होगा कि गिरिराज किशोर का 'पहला गिरमिटिया' एक सफल तथा सर्वश्रेष्ठ उपन्यास है।

प्रस्तावना :

स्वातंत्र्योत्तर मराठी उपन्यासकारों में विश्वास पाटील का नाम उल्लेखनीय है। उन्होंने मराठी में उपन्यास, कहानी-संग्रह तथा नाटक आदि विधाओं में लेखन किया है। विश्वास पाटील का 'महानायक' उपन्यास का विषयगत विवेचन यहाँ प्रस्तुत है -

---

1. गिरिराज किशोर - पहला गिरमिटिया, पृष्ठ - 614

2.2 विश्वास पाटील के 'महानायक' का विषयगत विवेचन -

प्रकाशन क्रम की दृष्टि से 'महानायक' विश्वास पाटील का छठा उपन्यास है। इस उपन्यास का प्रथम प्रकाशन राजहंस प्रकाशन, पुणे से सन् 1998 में हुआ। 704 पृष्ठों का यह उपन्यास नेताजी सुभाषचंद्र बोस के चरित्र पर केंद्रित ऐतिहासिक उपन्यास है। इस उपन्यास के लिए उन्हें महाराष्ट्र शासन का सर्वोत्कृष्ट उपन्यास पुरस्कार, कऱ्हाड पुरस्कार तथा मुकदम साहित्य पुरस्कार आदि पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है।

प्रस्तुत उपन्यास लिखने के दौरान विश्वास पाटील ने ब्रह्मदेश, थायलंड, जर्मन, फ्रान्स, इंग्लैंड, इटली आदि देशों की यात्रा की। 'महानायक' उपन्यास का अब तक हिंदी, गुजराती, कन्नड, राजस्थानी, मल्यालम्, बंगाली तथा तमिल आदि ग्यारह भाषाओं में अनुवाद कार्य संपन्न हुआ है।

विश्वास पाटील का 'महानायक' नेताजी सुभाषचंद्र बोस के जीवन पर आधारित ऐतिहासिक चरित्रात्मक उपन्यास है। इस उपन्यास में उनके राष्ट्रवादी, कर्तव्यवादी, जनवादी, त्यागी, स्वाभिमानी, देशप्रेमी आदि विभिन्न चारित्रिक पहलुओं को चित्रित किया गया है। इस उपन्यास की महानता के बारे में वसंत कानेटकर जी लिखते हैं - ''यह उपन्यास एक 'महान कलाकृति' है, मात्र इतना कह देने से इसका उचित मूल्यांकन नहीं होता। मैं नि:संदेह रूप से कहना चाहता हूँ कि इस शताब्दि की यह सर्वश्रेष्ठ कृति है।''[1] उपर्युक्त कथन से स्पष्ट होता है कि 'महानायक' उपन्यास अंतिम दशक की महान कलाकृति है। डॉ. चंद्रकांत बांदिवडेकर जी लिखते हैं - ''सुभाषचंद्र के जादुई व्यक्तित्व के लगभग सभी पहलुओं को, जो अब तक बिखरे हुए रूप में थे, विश्वास पाटील ने रसात्मक भूमि पर ले आने का महत्त्वपूर्ण साहित्यिक कार्य किया है।''[2] कहना सही होगा कि प्रस्तुत उपन्यास सुभाषचंद्र बोस के बहुआयामी व्यक्तित्व एवं चरित्र पर प्रभाव डालता है।

सुभाषचंद्र बोस की प्रारंभिक शिक्षा बंगाल में हुई। बचपन से ही वे मेधावी छात्र थे। उनके बाल मन पर स्वामी विवेकानंद के विचारों का गहरा प्रभाव दिखाई देता है। हाईस्कूल की पढ़ाई के दौरात रवेनेशा कॉलेजिएट स्कूल में एक दिन श्रीवास्तव सर ने सुभाषचंद्र बोस को इंग्लैंड की रानी की प्रार्थना कहने को कहा तब वे निड़र होकर कहते हैं - ''जा ऽऽ, मी

---

1. विश्वास पाटील - महानायक (अनु.रामजी तिवारी), पृष्ठ - फ्लैप से उद्धृत
2. वही, पृष्ठ - फ्लैप से उद्धृत

नाही गाणार इंग्लंडच्या राणीची प्रार्थना ऽ ऽ''[1] (जाइए, मैं नहीं गाऊँगा इंग्लैण्ड की महारानी की प्रार्थना।) उक्त कथन से समझने में देर नहीं लगती कि सुभाषबाबू में बचपन से ही विद्रोहात्मक विचार दिखाई देते हैं। सुभाषबाबू मैट्रिक की परीक्षा द्वितीय नंबर से उत्तीर्ण होते हैं। अत: स्पष्ट है कि वे मेधावी छात्र रहे हैं।

मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण होने के पश्चात् सुभाषचंद्र बोस को प्रेसिडेंसी कॉलेज में प्रवेश मिल जाता है। प्रेसिडेंसी कॉलेज, कलकत्ता यह अंग्रेजों का गौरव स्थान है। वहाँ प्रा.ओटन जो इतिहास के प्राध्यापक है, बेमतलब हिंदुस्तानी नेताओं की हँसी उड़ाते हैं तथा भारतीय संस्कृति का अपमान करते हैं। इसी कारण कॉलेज के सारे छात्र हड़ताल करते हैं। प्रा.ओटन सर हड़ताल करनेवाले छात्रों को पाँच रूपयों का जुर्माना कर देते हैं। एक दिन प्रा. ओटन सर एक लड़के को बेवजह से पिटते हैं। मध्यावकाश में छात्रों ने मिलकर प्रा. ओटन सर की पिटाई की। कॉलेज के बंशीधर चपराशी ने सुभाषचंद्र बोस को मारपीट की जगह देखा था। अत: जाँच समिती के पूछनेपर सुभाषबाबू घटित घटनाओं की जानकारी बताने से इन्कार कर देते हैं। इस घटना के कारण उन्हें महाविद्यालय से निकाल दिया जाता है। अत: माँ जननी घटित घटना के बारे में माफी माँगने को कहती है। किंतु सुभाषबाबू माफी माँगने को तैयार नहीं होते। वे अपनी माँ से कहते हैं - ''कशासाठी मागायची माफी, माँ? काही चुकलं तर ना? कोणता गुन्हा केला मी? ओटनना स्वत: मारलं? तो विद्यार्थ्यांचा उद्रेक होता! आणि मला वाटतं तो रास्तही होता. गुन्हा न करता माफी मागणं माझ्या मनाला पटत नाही.''[2] (किस लिए माँगे माफी? कोई गलती हुई तो ना? कौन-सा अपराध किया है मैंने? ओटन को स्वयं मैंने मारा? वह तो विद्यार्थियों का विद्रोह था! और मुझे लगता है, वह उचित भी था। अपराध न करके भी किसी घटना के लिए व्यर्थ में माफी माँगने की बात मेरे गले उतरती नहीं।) उक्त कथन से सुभाषबाबू के स्वाभिमानी विचार दृष्टिगोचर होते हैं। दो साल बाद सुभाषबाबू को स्कॉटिश कॉलेज में प्रवेश मिलता है और स्नातक परीक्षा में कलकत्ता विश्वविद्यालय से द्वितीय तथा कॉलेज में पहला नंबर प्राप्त करते हैं।

सुभाषबाबू के क्रांतिकारक विचार देखकर माता-पिता सुभाषबाबू को आय.सी.एस. की परीक्षा के लिए इंग्लैंड भेजने का निर्णय लेते हैं। सुभाषबाबू अपने माँ-बाप

---

1. विश्वास पाटील - महानायक, पृष्ठ - 28
2. वही, पृष्ठ - 42

को दु:ख नहीं देना चाहते थे। इसी कारण आय.सी.एस. के लिए इंग्लैंड जाना तय करते हैं। इंग्लैंड में जाकर वे पूरी लगन के साथ पढ़ाई करते हैं और चौथे स्थान से उत्तीर्ण होते हैं। देशसेवा, राष्ट्रप्रेम के कारण वे अंग्रेजों की सनदी नौकरी करने की बजाय उस नौकरी से त्यागपत्र देना उचित समझते हैं। त्यागपत्र देने की बात घरवालों को मालूम होनेपर माँ उन्हें उपदेश करती हुई कहती हैं - ''बाळ, तुझ्या कल्याणाच्या चिंतेपोटीच मी अनेक रात्री डोळ्याच्या वाती जाळल्या आहेत. पण माझीही स्वप्ने होती ती एका सामान्य आईची. तू आज जिची सेवा करायला चालला आहेस ती आई फार मोठी आहे. आता इतरांना काय वाटेल याची फिकिर करू नकोस. तू तुझ्या मार्गानं चालत रहा. आज गांधीजी ज्या ध्येयासाठी उभे आहेत त्यांच्याच सावलीत तू जातो आहेस. मला त्याचं दु:ख नव्हे अभिमान वाटतो.''[1] (बेटा, तेरे कल्याण की चिंता में मैंने कई रातों से आँखों की बाती जला रखी हैं। लेकिन मेरे जो स्वप्न थे वह सामान्य माँ के थे। तू आज जिसकी सेवा करने चला है, वह माँ मुझसे अधिक महान है। यहाँ अन्य लोगों को कैसा लगेगा, तू इसकी चिंता मत कर। तू अपने ही मार्ग पर चलता रह। आज गांधीजी जिस ध्येय के लिए खड़े हैं उन्हीं की परछाई होने जा रहा है। मुझे इसका दु:ख नहीं अपितु अभिमान हो रहा है।) उक्त कथन से स्पष्ट होता है कि सुभाषबाबू की माँ के विचार देशप्रेमी, राष्ट्रहित व्यापक धरातल पर अभिव्यक्त करते हैं। उनकी माँ का उपर्युक्त उपदेश निश्चय ही उल्लेखनीय कहना होगा।

आय.सी.एस. से त्यागपत्र देने के बाद सुभाषबाबू 14 अप्रैल, 1924 को महापालिका चुनाव में विजयी होते हें। यही से उनका राजनीति में प्रवेश होता है। उन्हें कलकत्ता के महापालिका के मुख्य कार्यकारी अधिकारी का पद मिलता है। देशबंधु कलकत्ता के प्रथम महापौर चुने जाते हैं। सुभाषबाबू ने कई गरीब लोगों को नौकरियाँ दिलाई हैं।

लाहौर काँग्रेस में 26 जनवरी को स्वतंत्रता दिवस के रूप में मनाये जाने का निर्णय सुभाषबाबू तथा उनके साथियों ने ही लिया। उन्होंने तथा स्वयंसेवकों ने उस दिन 'वंदे मातरम्' के साथ 'इन्कलाब जिन्दाबाद' के नारे लगाए। इसका विरोध ब्रिटिश सरकार के अधिकारियों ने किया। फिर भी निड़रता से सुभाषबाबू तथा स्वयंसेवक आगे बढ़े। हुक्म न मानने के कारण सुभाषबाबू को बहुत पीटा और प्रेसिडेन्सी जेल में बंद भी कर दिया। जेल में

---

1. विश्वास पाटील - महानायक, पृष्ठ - 54

क्षय रोग के कारण सुभाषबाबू की हालत दिन-प्रति-दिन नाजुक होती गई। अगर सुभाषबाबू की मृत्यु जेल में हुई तो इसका दोष सरकार पर आ जायेगा इस कारण उन्हें उपचार के लिए यूरोप जाने की अनुमति मिल जाती है। आस्ट्रिया की राजधानी वियेना पहुँचने पर सुभाषबाबू का उपचार डॉ. फ्युर्थ के निगरानी में शुरू हो जाता है। वहाँ सुभाषबाबू के स्वास्थ्य में सुधारणा होती हैं। दो महीने बाद पता चलता है कि विठ्ठलभाई पटेल विश्राम के लिए अमरिका से वियेना आ रहे हैं। विठ्ठलभाई आने के बाद सुभाषबाबू को मिलते हैं। दोनों देश को लेकर चर्चा करते हैं।

विठ्ठलभाई पटेल सुभाषबाबू को स्वतंत्र भारत की कल्पना के बारे में पूछते हैं, तब सुभाषबाबू प्रत्युत्तर में कहते हैं - ''आम्हाला हवं प्रबळ संघराज्य. जिथं किसान आणि कामगारांचा कैवार घेणारं जागरूक शासन असेल. रशियासारखं पंचवार्षिक नियोजन हवं. जड उद्योगांचा आणि औद्योगिकरणाचा देशात पाया घातला जावा. ग्रामोद्योगांनाही गती मिळावी. लोकसंख्यावाढीच्या भस्मासुराला वेळीच बाटलीत बंद करायला हवं. नको जातीपातीत भेदभाव. हवं भाषेभाषेत ममत्व. असा नवा साम्यवाद आमच्याच मातीचा गंध घेऊन उमलावा, ज्यानं पुरातन काळासारखं आधुनिक युगातही जगाचं नेतृत्व करावं ऽ !''[1] (हमें चाहिए एक शक्तिसंपन्न संघराज्य, जहाँ किसानों और मजदूरों की हिमायत करनेवाली जागरूक सरकार हो, देश में आधारभूत उद्योगों और औद्योगीकरण की बुनियाद डाली जाए। ग्रामोद्योगों को भी प्रोत्साहन मिले, जनसंख्या की वृद्धि पर समयोचित अंकुश लगाया जाए, जाँति-पाँति का भेदभाव समाप्त हो, विभिन्न भाषा-भाषियों में अपनत्व बढ़े। अपनी ही माटी की गंध से रचा-बना हम एक ऐसा साम्यवाद ले आएँ जो प्राचीन काल की भाँति आधुनिक काल में भी विश्व का नेतृत्व करें!) उक्त कथन से लेकर औद्योगीकरण तक की हिमायत करते हैं। यही विचार स्वतंत्र भारत की उनकी कल्पना में दिखाई देता है। विठ्ठलभाई ने सुभाषबाबू के विचार तथा देशप्रेम देखकर उन्होंने अपनी वसियत सुभाषबाबु के नाम कर दी थी। इसी बीच विठ्ठलभाई पटेल की 22 अक्तूबर, 1933 को मृत्यु हो जाती है।

धीरे-धीरे सुभाषबाबू के स्वास्थ्य में सुधार हो जाता है। सुभाषबाबू को किराये पर वियेना में फ्लैट मिल जाता है। वे अपने मित्र डॉ. माथुर को बोलकर अपने पुस्तक लेखन की ईच्छा प्रकट करते हैं और सहायक के रूप में डॉ. माथुर एमिली को भेज देते हैं। सुभाषबाबू

1. विश्वास पाटील - महानायक, पृष्ठ - 157

एमिली को सेक्रेटरी के रूप में नियुक्त करते हैं। हिंदुस्तान के स्वातंत्र्य संघर्ष पर 'इण्डियन स्ट्रगल' नाम से पुस्तक लेखन शुरू करते हैं। एमिली को ग्रंथालय से किताबें लाना, लेखन तथा पुनर्लेखन करना, सुभाषबाबू को जर्मन भाषा सिखाने में मदद करना, चाय-नाश्ता तथा दवा-पानी वक्त पर देना आदि काम करती थी। किताब का काम उचित ढंग से हो जाता है। इसी बीच सुभाषबाबू के पिताजी बीमार होने की खबर मिलती है। जब सुभाषबाबू भारत को वापिस जा रहे थे, इसी बीच जब वे कराची में थे तभी उनकी मृत्यु हो जाती है।

महात्मा गांधी जी सुभाषबाबू को हरिपुर काँग्रेस अध्यक्ष के रूप में चुनते हैं। लेकिन महात्मा गांधीजी को सुभाषबाबू के क्रांतिकारक विचार पसंद नहीं आते। इसी बीच भूलाभाई और कृपालानी ने गांधीजी को बताया कि सुभाषबाबू ने यूरोप में लिखी 'इण्डियन स्ट्रगल' यह किताब सिर्फ दिखाते ही नहीं बल्कि गांधी जी के बारे में लिखे विचारों को रेखांकित कर दिखाते हैं। विश्वव्यापी प्रदर्शन के लिए हिटलर के दो साथी भारत आते हैं। उनसे सुभाषबाबू गुप्त रूप से मिलते हैं। सुभाषबाबू के हिटलर के दो साथियों से गुप्त रूप से मिलने की बात कृपलानी और भूलाभाई गांधी जी को बताते हैं साथ ही उनके साथ बात करते हुए सुभाषबाबू के निकाले फोटो की फाईल गांधी जी को दिखाते हैं। अत: इन दो घटनाओं के कारण गांधी जी और सुभाषबाबू में मतभेद होते हैं।

त्रिपुरा काँग्रेस के अध्यक्ष के रूप में सुभाषबाबू पराजित हो यह महात्मा गांधी जी की दृढ़ ईच्छा थी। क्योंकि महात्मा गांधी जी सुभाषबाबू के क्रांतिकारी विचारों से सहमत नहीं थे। फिर भी सुभाषबाबू को त्रिपुरा में 1580 वोट मिले और देशभक्त सीताराम भैया को 1377 वोट मिलते हैं। इस प्रकार सुभाषबाबू 203 मतों से विजयी होते हैं। तब इस विजय पर अपनी नाराजगी बताते हुए महात्मा गांधी जी कहते हैं - "मी अगदी ठरवूनच पहिल्यापासून त्यांच्या फेरनिवडीच्या विरोधात होतो. शिवाय पट्टभींना त्यांची उम्मेदवारी मागे घेऊन द्यायला सर्वस्वी मीच कारणीभूत ठरलो होतो. म्हणूनच हा पराभव पट्टाभींचा नसून तो माझा स्वत:चाच असल्याचं मी समजतो."[1] (मैं प्रारंभ से ही उनके पुन: चुन जाने के विरुद्ध था। पट्टाभि को उम्मीदवारी वापस न लेने देने के पीछे एकमात्र कारण मैं ही था, इसलिए मैं समझता हूँ कि यह पट्टभि की नहीं, बल्कि स्वयं मेरी पराजय है।) कहना सही होगा कि गांधी जी सुभाषबाबू के पुन: अध्यक्ष होने के विरोध में था।

1. विश्वास पाटील - महानायक, पृष्ठ - 191

कॉंग्रेस अध्यक्ष पद से इस्तीफा देने के बाद सुभाषचंद्र बोस 'फारवर्ड ब्लॉक' की स्थापना करते हैं। महात्मा गांधी जी द्वारा किया जानेवाला विरोध सहन न होने के कारण तथा देश के लिए कुछ करने की अमिट लालसा से सुभाषचंद्र बोस जर्मन जाते हैं। वहाँ बर्लिन में सुभाषबाबू की भेंट एमिली से होती है। उससे वे शादी करते हैं। वे जर्मनी में एड्म ट्रॉट से गुलामी राष्ट्र की मुक्ति हेतु सहायता माँगते हैं। जर्मन सरकार के सामने अपनी माँगे निम्नांकित रूप में माँगते है -

1. प्रचार कार्य के लिए आकाशवाणी केंद्र।
2. अस्थायी सरकार की माँग।
3. जर्मनी को महायुद्ध में विजय मिलने के बाद हिंदुस्तान को स्वतंत्र कर देने की घोषणा।

किंतु हिटलर ने उनकी सिर्फ 'प्रचार कार्य के लिए आकाशवाणी केंद्र' की माँग को स्वीकृत किया। जर्मन में हिटलर से मदद न मिलने पर 'इटली' के लिए जाते हैं और वहाँ मदद न मिलनेपर सुभाषबाबू 90 दिनों की खतरनाक पणडुब्बियों की समुद्र-यात्रा कर जपान जाते हैं। इसी बीच 19 नवंबर, 1942 को सुभाषबाबू को अनिता नामक कन्यारत्न होता है।

सुभाषबाबू के साहसिकता, देशाभिमान तथा राष्ट्रनिष्ठा आदि गुणों से प्रभावित होने के कारण ही जपान के प्रधानमंत्री तेजो सुभाषबाबू को सभी प्रकार का सहयोग देना चाहते हैं। इसी बीच 16 जून, 1943 जपान की संसद - हिंदुस्तान को वैभवशाली बनाने एवं समृद्ध बनाने के लिए सुभाषबाबू को जितना संभव हो उतना सहयोग देने की घोषणा करते हैं। 21 अक्तूबर, 1943 सिंगापुर में रहनेवाले भारतीय युद्ध कैदियों को लेकर 'आजाद हिंद फौज' की स्थापना नेताजी सुभाषचंद्र बोस करते हैं। इसके लिए वे जपान निवासी हिंदुस्तानियों को पैसा, सोना आदि को इकट्टा कर 'आजाद हिंद फौज' को समृद्ध बनाने का प्रयास करते हैं। वे न केवल 'आजाद हिंद फौज' में पुरुषों को शामिल करते हैं बल्कि 'आजाद हिंद फौज' में अनेक लड़कियों तथा स्त्रियों को भी शामिल करते हैं। जैसे - डॉ. लक्ष्मी, मायावती तथा लावण्यवती आदि अनेक लड़कियों और औरतों को 'आजाद हिंद फौज' में शामिल करते हैं।

जपान सरकार युद्ध के लिए अनेक-अनेक सैनिकों का 'आजाद हिंद फौज' के सहयोग के लिए भेजती है। आजाद हिंद में शाहनवाज, ढिल्लों, मेजर भुरवेल, बॅ. यल्लापा

भोसले, हबीब आदि सैनिक ब्रिटिश तथा अमरिकी सरकार से लड़ते हैं। अनेक सैनिक अपनी जान की बाजी लगा देते हैं। युद्ध के समय खाने के अभाव में जपानी सैनिक हाथी, घोड़े आदि का मांस तक जीवित रहने के लिए खाते हैं। इसमें कई सैनिक पेशिच बीमारी से मृत्युमुखी पड़ते हैं। इसी बीच जवाहरलाल नेहरु के सुभाषबाबू के बारे में विचार 'हिंदुस्तान टाईम्स' इस समाचार पत्र में छपकर आते हैं, जिसका कतरन सुभाषबाबू पढ़ते हैं। उसमें जवाहरलाल ने कहा था - "सुभाष जर जपानी लष्कर घेऊन भारतात प्रवेश करणार असेल, तर सुभाषशी दोन हात करायला मी कचरणार नाही."[1] (अगर सुभाष जपानी सेना लेकर भारत प्रवेश करेगा तो उससे दो हाथ करने में मैं पीछे हटूँगा नहीं।) उक्त कथन से जवाहरलाल नेहरु के सुभाषबाबू के प्रति द्वेषपूर्ण विचार प्रकट होते हैं ।

इसी बीच समाचार सुनाई देता है कि अमरिका के बी-29 हवाई जहाज द्वारा जपान के हिरोशिमा और नागासाकी पर विध्वंसकारी बम फेंके गए हैं। इस दुर्घटना में लगभग सत्तर हजार से एक लाख लोगों तक की मृत्यु हो जाती है। उस वक्त जपान सरकार अमेरिका के सामने आत्मसमर्पण करती है।

जपान के आत्मसमर्पण करने के बावजूद नेताजी के हौसले बुलंद थे। वे रुस जाना चाहते थे। तब तेराउची सैगोन हवाई अड्डे को सुभाषबाबू के बारे में जानकारी देकर तथा लेफ्टनेंट शिडोई को बताकर सुभाषबाबू को उनके हवाई जहाज से रशिया शहर तक जाने की बात करते हैं। उस हवाई जहाज में 9 लोगों की जगह होने के बावजूद 12 लोगों को बिठाया जाता है। हवाई जहाज का दाहिना पंखा टूट जाने के कारण हवाई जहाज गिर जाता है। जख्मी नेताजी को नॉनमॉन के फौजी अस्पताल में रखा जाता है लेकिन 18 अगस्त, 1945 को नेताजी की मृत्यु हो जाती है। नेताजी के मृत्यु के बारे में अनेक विवाद उत्पन्न हो गए। उनकी मृत्यु की जाँच के लिए सन् 1956 में शहनवाज समिति, सन् 1970 से सन् 1974 को जी.डी. खोसला समिति तथा सन् 1999 को मुखर्जी समिति आदि समितियों का गठन किया गया। फिर भी नेताजी की मृत्यु के बारे में लोगों में संभ्रम है। नेताजी की मृत्यु के बारे में स्वयं विश्वास पाटील कहते हैं - "संभ्रम असण्याचे काही कारण नाही. दुर्दैवाने नेताजींचा मृत्यु विमान अपघातामध्ये झाला. सुरूवातीला मलाही असेच वाटायचे. पण बाकी सर्व कागदपत्रे

1. विश्वास पाटील - महानायक, पृष्ठ - 471

पाहिल्यानंतर दुर्दैवाने नेताजी त्या विमान अपघातात ठार झाले. माझ्या मनामध्ये काही संभ्रम राहिलेला नाही. एक ब्रिटिश एजंटानी शोध घेतलेला आहे आणि भारतामध्ये नेताजींच्या मृत्युची चौकशीची मागणी होण्यापूर्वी शत्रूंनी नेताजी जीवंत आहेत काय? असले तर कोठे आहेत? याचा शोध घेतला. त्यामध्ये त्यांनी डॉक्टरचा जबाब घेतलेला आहे. दुसरं मैकार्थर नावाचा जो अमेरिकन सेनापती होता तो जपानला जिंकायला गेला आणि जपान जिंकल्यानंतर पहिलं नेताजी कोठे आहेत याचा शोध घेण्याचा प्रयत्न केला आणि त्यानंतर गुप्त रिपोर्ट दिलेला आहे, तर मैकार्थरच्या रिपोर्टनुसार सुद्धा नेताजीचा विमान अपघातामध्येच मृत्यु झालेला आहे हे सिद्ध होते. तिसरी गोष्ट म्हणजे भारतामध्ये पंडित नेहरु यांना कदाचित सुभाषबाबू आपल्याला राजकीयदृष्ट्या वरचढ ठरतील की काय? अशी भीति होती म्हणून त्यांनी एक गुप्त कमिशन नेमलेलं होते. त्यामध्ये एस.ए. अय्यर म्हणजे नेताजीचे ते प्रचारमंत्री होते. नंतर ते भारतात आले. महाराष्ट्रामध्ये मुंबई राज्याच्या सेवेत होते. त्यांना नेहरु यांनी जपानमध्ये पाठवले. नंतर जपानमध्ये 2-3 महिने राहून अभ्यास करुन त्यांनी नेहरुंना रिपोर्ट दिला कि दुर्दैवाने नेताजी त्या विमान अपघातात मृत्यु पावले."[1] (भ्रम का कोई कारण नहीं। दुर्भाग्य से नेताजी की मृत्यु हवाई जहाज की दुर्घटना में ही हुई थी। प्रथमत: मेरे मन में भी भ्रम था। सभी दस्तावेज देखने के पश्चात् दुर्भाग्य से नेताजी उसी हवाई जहाज दुर्घटना में चल बसे। अब मेरे मन में कोई भ्रम नहीं है। एक ब्रिटिश एजंट दूवारा शोध किया गया है और भारत में नेताजी की मृत्यु की तहकीकात की माँग के पूर्व शत्रु ने नेताजी जीवित है क्या? है तो कहाँ है? इसकी खोज करने का प्रयास किया। उसमें उन्होंने डॉक्टर का बयान लिया है। दूसरी बात यह है कि मैकार्थर नाम का एक अमेरिकन सेनापती था। वह जपान जीतने गया और जपान जीतने के बाद प्रथमत: नेताजी कहाँ है इसका शोध लेने का प्रयास किया और उसके बाद उसने एक गोपनीय रिपोर्ट दिया है। जो कि मैकार्थर के रिपोर्ट के अनुसार नेताजी की मृत्यु हवाई जहाज दुर्घटना में ही हुई है यह सिद्ध हुआ। तीसरी बात यह कि भारत में पंडित नेहरु को शायद ऐसा लगा कि सुभाषबाबू राजनीति में अग्रेसर रहेंगे यह भय था इसलिए उन्होंने एक गुप्त जाँच कमिशन नियुक्त किया था। उसमें एस.ए. अय्यर यानी नेताजी के प्रचारमंत्री थे। बाद में वे भारत आए थे। महाराष्ट्र के मुंबई राज्य में कार्यरत थे। उन्हें नेहरु ने जपान भेजा। बाद में 2-3 महीने रहकर

1. परिशिष्ट - 1 से उद्धृत

अभ्यास कर उन्होंने नेहरु को रिपोर्ट भेजी कि दुर्भाग्य से नेताजी की मृत्यु हवाई जहाज की दुर्घटना में हुई।) उक्त कथन से स्पष्ट होता है कि नेताजी कि मृत्यु हवाई जहाज की दुर्घटना में हुई। तीन समितियों के रिपोर्ट का अध्ययन करने के पश्चात् मेरी भी अपनी यह मान्यता है कि नेताजी की मृत्यु हवाई जहाज दुर्घटना में हुई ।

2.2.2 **निष्कर्ष** -

विश्वास पाटील के 'महानायक' उपन्यास में सुभाषचंद्र बोस के व्यक्तित्व के लगभग सभी पहलुओं को जो अब तक बिखरे हुए रूप में थे, उन्हें रसात्मक भूमिपर लाने में सफल हुआ है। इनमें वे सुभाषबाबु के बचपन से लेकर मृत्यु तक की घटनाओं का सूक्ष्म अंकन करने में भी पाटील जी सफल हुए हैं। इसमें उन्होंने सुभाषबाबू के देशप्रेमी, त्यागी, राष्ट्रवादी, कर्तव्यवादी, जनवादी, स्वाभिमानी तथा निड़र आदि विभिन्न पहलुओं को प्रस्तुत किया है। इसमें सुभाषबाबू के आय.सी.एस. से त्यागपत्र, काँग्रेस अध्यक्ष बनना, गांधीजी से मतभेद, काँग्रेस अध्यक्ष पद से इस्तिफा, सुभाषबाबू का जर्मन जाना, हिटलर से मदद न मिलनेपर जपान जाना, जपान में 'आजाद हिंद फौज' का निर्माण, अमेरिका का हिरोशिमा-नागासकी पर बम्बारी करना, जपान आत्मसमर्पण, 18 अगस्त, 1945 को रशिया जाते समय हवाई जहाज दुर्घटना में मृत्यु होना आदि घटनाएँ सूक्ष्मता के साथ अभिव्यक्त हुई हैं। शोधार्थि की मान्यता है कि 'महानायक' एक सफल और सर्वश्रेष्ठ कृति है।

2.3 'पहला गिरमिटिया' तथा 'महानायक' तुलनात्मक मूल्यांकन :

2.3.1 **साम्य** -

1. 'पहला गिरमिटिया' तथा 'महानायक' स्वातंत्र्योत्तर काल के अंतिम दशक के वैचारिक दृष्टि से सशक्त और बृहत् उपन्यास हैं।
2. दोनों ऐतिहासिक चरित्रप्रधान उपन्यास हैं।
3. पृष्ठों की संख्या की दृष्टि से 'पहला गिरमिटिया' 904 पृष्ठों का तथा 'महानायक' 704 पृष्ठों का बृहत् उपन्यास है।

15204

4. कथ्य को आगे बढ़ाने के लिए दोनों उपन्यास में संवादों को आधार बनाया है। इसलिए संवाद दोनों उपन्यासकारों के उपन्यास की जान बन गए हैं।
5. दोनों उपन्यासों के नायकों में संघर्ष दिखाई देता है।
6. दोनों उपन्यासकारों के नायक अपने ध्येय के प्राप्ति के लिए परिवारों से टूटे हुए दिखाई देते हैं।
7. विशुद्ध यथार्थता दोनों उपन्यास की विशेष प्रवृत्ति है।
8. दोनों उपन्यासों के नायक उच्चशिक्षित हैं।

   जैसे - 'पहला गिरमिटिया' - मोहनदास - बैरिस्टर,

   'महानायक' - सुभाषबाबू - आय.सी.एस.।

2.3.2 **वैषम्य -**

1. 'पहला गिरमिटिया' में चित्रित मोहनदास के विचार अहिंसात्मक हैं बल्कि 'महानायक' में चित्रित सुभाषबाबू के विचार क्रांतिकारी एवं विद्रोहात्मक हैं।
2. 'पहला गिरमिटिया' में वर्णनात्मकता अधिकतम दिखाई देती है। (उदा. समुद्र वर्णन - दक्षिण अफ्रीका प्रस्तान का वर्णन) बल्कि 'महानायक' में वर्णनात्मकता अल्प दिखाई देती है।

****